- चतुर्थ प्रकरण -

१) हिंदी और कन्नड में कथा साहित्य का विकास और असे उपन्यास साहित्य को प्रेरणा:-

पिछले प्रकरण में संस्कृत, प्राकृत अेवं अपभ्रंश साहित्यों की कथा परंपरा का परिचय दिया गया है, जो आधुनिक भारतीय भाषाओं का अुपजीव्य है. यही कथा परंपरा हिंदी तथा कन्नड भाषाओं में प्रवाहित रही. तत्कालीन लोक कथाओं के अिसी प्राचीन कथा-भंडारने अिन भाषाओं को समृध्द बनाया है. यह परंपरा साहित्य के दो स्वरूपों व्दारा अभिव्यक्त हुअी है, काव्य व्दारा तथा गद्य के माध्यम से. अिन्हीं का स्थूल परिचय यहाँ प्रस्तुत किया जा रहा है.

अ) काव्य-

यथा पहले ही कहा जा चुका है कि कन्नड भाषा में नौ वीं शताब्दी में ही साहित्य प्राप्त होता है. हिंदी साहित्य का प्रादुर्भाव ग्यारहवीं शताब्दी में हुआ. संयोग की बात यह है कि आरंभ का युग दोनों भाषाभाषी प्रदेशों में स्वाधीनता की रक्षा के लिअे आत्म गौरव के संरक्षण के लिअे आये दिन युध्द चला करते थे. यह संग्राम का युग था, फलत: अिस युग में निर्मित साहित्य वीररस प्रधान कथा काव्य है. कन्नड का प्रथम काव्य महाकवि पंप कृत 'विक्रमार्जुन विजय' तथा व्दितीय काव्य कवि रन्न विरचित 'गदायुध्द' है, रचनाकाल क्रमश: ई.सन् ९४० और ९९३ है.[१] दोनों वीर और रौद्र रससे पूर्ण हैं. हिंदी में यह युग 'वीरगाथा' का था और अिस युग में कविचंद कृत रासो ग्रंथ 'पृथ्वीराजरासो' (जिस की रचना ई.सन् ११९२ के पहले हुअी), नरपतिनाल्ह कृत 'बीसलदेव रासो' तथा

---

१ डा आर. एम मुगळी – 'कन्नड साहित्य चरित्रे' पृ ७९

२) पं. रामचंद्र शुक्ल - 'हिंदी साहित्य का अितिहास' दशम संस्क. पृष्ठ ३१

'हम्मीर रासो' आदि वीरकथा के 'रासो' ग्रंथ ही तैयार हुअे. कन्नड के अुपर्युक्त महाकाव्यों का आधार महाभारत की धार्मिकता-प्रधान कथा है, पर अिन कवियोंनें अिन को लौकिक कथा के स्वरूप में कहने का प्रयत्न किया है. कथानायकों की तुलना अपने आश्रय दाता वीर राजाओं से कर के दोनों में अभेद स्थापित किया है. 'पृथ्वीराज रासो' आदि काव्यों की कथाओं का आधार तत्कालीन वीर नरेशों के वीर समर, अैतिहासिक घटनाएँ हैं. अिन काव्यों में वीररस के चित्रण के साथ श्रृंगार का चित्रण भी प्रभावी है. अिन के रचयिता चारण थे "ये चारण राजाके पराक्रम, विजय, शत्रु कन्या-हरण आदि का अत्युक्तिपूर्ण आलाप करते रणक्षेत्रों में जाकर वीरों के हृदय में अुत्साह की अुमंगें भरते और सम्मान पाते."[१] अिन कथाओं के बीच अिन वीरों की प्रेमकथाएँ भी वर्णित होतीं. "पृथ्वीराज रासो में अनेक प्रकार की कथा अेवं आख्यान वर्णित हैं.----- अिस में अपभ्रंश की कथा, चरित, पुराण आदि विभिन्न शैलियों का मिश्रण सा हो गया है और अपने रूपाकार की दृष्टिसे यह भी 'बृहत् कथा' बन गया है."[२] ये काव्य वीर और श्रृंगार की कथाओं के भंडार हैं, अत: तत्कालीन जनता के मनोरंजन के साधन रहे. 'विक्रमार्जुन विजय' तथा 'गदायुध्द' दोनों में वीर या रौद्र रस ही प्रधान है और श्रृंगार की कथाएँ प्रासंगिक, गौण हैं. अिन रासो ग्रंथों तथा कन्नड के महाकाव्यों में तलवार की कडक और चमक अर्थात् युध्द का भीकर वर्णन समान है. हिंदी और कन्नड के ये कवि केवल कवि ही नहीं, योध्दा भी थे. कविचंद और पंप रणरंग में भी पराक्रमी थे.

दोनों कथा-काव्यों में बडा भेद यह है कि 'रासो' ग्रंथों में श्रृंगार और वीर समान कथापोषक हों तो कन्नड काव्यों में वीर और रौद्र का ही चित्रण प्रधान है. प्रेमकथा कहना अिन का लक्ष्य ही नहीं था. 'रासो'

---

१) पं. रामचंद्र शुक्ल - 'हिंदी साहित्य का अितिहास' दशम संस्क. पृष्ठ ३१

२) शिवनारायण श्रीवास्तव -'हिंदी अुपन्यास' सं. १०१६ संस्क. पृष्ठ १५

ग्रंथों की कथाएँ ऐतिहासिक हैं, पर कन्नड महाकाव्यों की कथा पौराणिक. कन्नड काव्य हिंदी के सदृश चारण काव्य नहीं. कन्नड में चारण काव्यों के सदृश शुध्द चरित (ऐतिहासिक) काव्य हैं कवि नंजुंड कृत 'कुमार रामन कथे' (१५२५ ई.) और गोविंद वैद्य कृत 'कंठीरव नरस राज विजय' (१६४८ ई.) आदि हैं.[१] 'कंठीरव नरस राज विजय' में 'पृथ्वीराज रासो' के सदृश कथानायक कंठीरव नरस राज की वीरता तथा श्रृंगार दोनों का चित्रण है.

अन्य-

य) ढोला मारुरा दूहा आदि -

हिंदी में 'ढोला मारुरा दूहा' 'माधवानल कामकंदला' 'हीर-रांझा' आदि शुध्द प्रेमकथा-काव्य हैं और जायसी कृत 'पद्मावत' (१५२८ ई.) कुतुबन कृत 'मृगावती' आदि प्रेमकथा प्रधान काव्य हैं, पर उपदेशपरक हैं. उिन सब में प्रेमकथाएँ विभिन्न स्वरूपों में आ जाती हैं. कन्नड में नागवर्म कृत 'कर्नाटक कादंबरी' (९६० ई.) संस्कृत की बाणभट्ट की अमर कृति का सुंदर भावानुवाद है. यही अेक अपूर्व प्रेम की कथा मानी जा सकती है. कवि जन्न विरचित 'यशोधरा चरित' (१२०९ ई.) में श्रृंगारकी सुंदर कथा है, पर अुस में बोध ही कवि का लक्ष्य है.

हिंदी और कन्नड में और भी अनेक सुंदर ग्रंथ हैं जिन में कथाएँ विविध रूप में चित्रित होती चली हैं. अिन सब की चर्चा यहाँ संभव नहीं, परंतु कथा-भंडार की दृष्टि से हिंदी के प्रसिध्द दो महाकाव्य 'रामचरित मानस' और 'सूर सागर' तथा कन्नड के 'कन्नड भारत'(कुमार व्यास भारत)और 'जैमिनी भारत' की चर्चा करना अुपयुक्त होगा. यद्यपि अुपर्युक्त काव्यों का आधार संस्कृत की रामायण या महाभारत आदि पौराणिक कथाएँ हैं, तथापि अिन कवियों की प्रतिभा के स्पर्श से ये कथाएँ परिवर्तित अेवं परिवर्धित

---

१) दे.जवरे गौड - 'कवि-कावइ विमर्श' प्रथम संस्करण, पृष्ठ १४७-१४९

होकर अपनेपन के साथ खडी हैं, 'रामचरित मानस' तुलसीदास से सन् १५७७ ई.में निर्मित हुआ[१] और 'सूरसागर' का सृजन सूरदास से सन् १५५० ई.से कुछ पूर्व हुआ.[२] ये दोनों हिंदी में मेरुकृतियाँ हैं. तुलसी और सूर दोनों कथन कला में निपुण हैं. तुलसीदासने वाल्मीकि रामायण के साथ तत्काल में प्राप्त विभिन्न रामकथा-ग्रंथों का आधार लिअे अिस अपूर्व काव्य का सृजन किया है. अिस में राम की प्रधान कथा को पुष्ट करती हुअी अनेक प्रासंगिक कथाएँ हैं जो प्रबंधकता का निर्वाह भी करती हैं. परंतु यह ग्रंथ वाल्मीकि रामायण से अधिक भक्तिपरक तथा नीति बोधक हैं.

र) सूरसागर-

सूरसागर का आधार है 'भागवत' के दशम स्कंध की कथा. भक्त कवि सूरने कृष्ण के जन्मोत्सव से अुस के यौवन तक की क्रीडापटु कृष्ण की विभिन्न लीलाओं की कथाएँ चित्रित की हैं. अिन में अेक-अेक कथा भी अपने में पूर्ण, मनोरंजक तथा कृष्ण की महिमा-बोधक है, परंतु सब कथाएँ कृष्ण के चरित्र के विकास का चित्रण तथा व्यक्तित्व की अभिव्यक्ति करनेवाली हैं. यों पूरे काव्य में सूक्ष्म अेक सूत्रता है.

ल) कन्नड भारत-

अिस की रचना कुमार व्यासने सन १४०० ई.में की.[३] समग्र भारत की कथा यहाँ दस पर्वों में आयी है. डा.मुगळिजी के अनुसार कन्नड भारत व्यास भारत का सरल अनुवाद नहीं है, पर स्वतंत्र प्रतिभा युक्त प्रतिनिर्माण है."[४] महाभारत की प्रधान कथा अनेक प्रासंगिक कथाओं से अिस काव्य में पुष्ट तथा रस पूर्ण हुअी है. ''कुमार व्यासने मानवीयता की

---

१) रामचंद्र शुक्ल -'हिंदी साहित्य का अितिहास' दसवाँ संस्क. पृष्ठ १२८
२) रामचंद्र शुक्ल - वही पृष्ठ १६०-१६१
३) डा.आर्.अेस.मुगळी -'कन्नड साहित्य चरित्रे' संस्करण २, पृष्ठ २४४
४) वे ही व ही पृष्ठ २५५

ओर असावधान न होते हुअे भी अुस के लिअे प्रेरक दैवी शक्ति की लीला का वर्णन भी किया है."[१]

ब) जैमिनी भारत -

कथन कला की दृष्टि से कन्नड की और अेक श्रेष्ठ कृति है लक्ष्मीश से विरचित कन्नड 'जैमिनी भारत' जिस की रचना करीब १५५० ई. में हुअी.[२] अिस में भारतोत्तर की कथा है. अिस में संस्कृत जैमिनी भारत का चुने हुअे रसपूर्ण अंशों का अनुवाद है, पर चुनने के कार्य में कवि की स्वयं की प्रतिभा है. "जैमिनी भारत अेक कथा नहीं, अेक कथा-संकलन है, अैसा कहना अधिक अुचित होगा."[३] लक्ष्मीश की कथनकला की प्रशंसा में अेक विव्दान का कहना है, "लक्ष्मीश अेक अुच्च श्रेणी का कथाकार है."[४] अिसी अुक्ति की पुष्टि में यह कथन भी पठनीय है , "अुसकी कथित कथाओं में सुधन्व,बब्रुवाहन, सीता, लव-कुश, चंद्रहास अिन की कथाओं में कथनकला गुण की दृष्टिसे अुन्नत होती चलती है. चंद्रहास की कथा में यह शिखर पर पहुंच चुकी है."[५]

ब) गद्य तथा गद्य कथा का विकास -

उपन्यास साहित्य का माध्यम तो गद्य है, अत: अिस साहित्य विधा के आविर्भाव के पूर्व सशक्त गद्य शैली का विकास अवश्यंभावी है. हिंदी और कन्नड भाषाओं में उपन्यास के अुदय के पहले अेक सशक्त गद्य शैली कथा साहित्य के व्दारा ही तैयार हो रही थी जिस का स्थूल परिचय कर देना आलोच्य साहित्य विधा की पृष्ठभूमि के स्वरूप में

---

१) डा.आर्.अेस्.भुगली -'कन्नड साहित्य चरित्रे' संस्करण २, पृष्ठ २६०
२) वे ही वही पृष्ठ २३७
३) वे ही वही पृष्ठ २७९
४) अनंत रंगाचार - उपर्युक्त ग्रंथ से अुध्दरित पृष्ठ २८२
५) डा.आर्.अेस्.भुगली -'कन्नड साहित्य चरित्रे' व्दितीय संस्क.पृष्ठ २७९

आवश्यक है. आलोच्य भाषाओं में गद्य में कथा साहित्य का विकास उपन्यास के आगमन के लिये प्रेरक हुआ.

च) वड्डाराधने (सन् ९२५ ई.)

कन्नड साहित्य में दसवीं शताब्दी में ही गद्य साहित्य के दर्शन होते हैं. 'वड्डाराधने' कन्नड की प्रथम, महत्वपूर्ण गद्यकथा है जिस की रचना शिव कोट्याचार्यने करीब ९२५ ई.में की.[१] यह जैन धार्मिक कथाओं का संकलन है. इस में विभिन्न १९ कथाएँ हैं. हरिषेण के 'कथाकोश' का आधार लिया गया है, पर कथा विस्तार, अनेक मार्मिक प्रसंगों की उद्भावना आदि में लेखक की मौलिक-प्रतिभा का परिचय मिलता है. इस के अध्ययन से स्पष्ट विदित होता है कि लेखक कथा-सृजन के कौशल में परिणत तथा मानव प्रवृत्ति तथा चाल-चलन के सूक्ष्मज्ञ थे. मान्य मुगळीजी का वक्तव्य है कि "सब कथाएँ सांप्रदायिक, नीतिपरक, वैराग्यबोधक हैं, और कथासूत्र एक दूसरे में गूँथे जाकर पेचिदा होचुके हैं, तो भी कथा के सारपूर्ण अंगों को पुन: पुन: पढने की इच्छा होती है. इस का कारण है वहाँ सन्निवेश, पात्र, कथोपकथन इन में एकत्रित सजीवता तथा मानवीयता."[२] इस ग्रंथ के महत्व के संबंध में वे ही लिखते हैं, "यह ग्रंथ सारे कन्नड साहित्य के इतिहास में सदा स्मरणीय, वैशिष्ट्यपूर्ण कृति है. इस में निहित कथनकला तथा वाणिकौशल सामान्य नहीं."[३]

छ) चावुंडराय पुराण (९७८ ई.)

कन्नड में गद्यशैली की दृष्टि से और एक महत्वपूर्ण ग्रंथ है चावुंडराय कृत 'चावुंडराय' पुराण (सन् ९७८ ई.)[४] यह भी एक जैन

---

१) डा.आर्.एस्.मुगळी -'कन्नड साहित्य चरित्रे' द्वितीय संस्क. पृष्ठ ७५
२) वे ही वही पृष्ठ ७९
३) वे ही वही पृष्ठ ७९
४) वे ही वही पृष्ठ ७९

धार्मिक ग्रंथ है जिस में चौबीस तीर्थंकरों की कथाएँ हैं. उस में चित्रित कथाएँ सांप्रदायिक तथा परंपरागत हैं, पर गद्य शैली की दृष्टि से यह गौरव-प्राप्त ग्रंथ है. उस में कन्नड के कथा-गद्य तथा शास्त्र-गद्यों का समन्वय है.

ज) दुर्गसिंह कृत पंचतंत्र (१०३० ई.)

उस के बाद दुर्गसिंह कृत 'पंचतंत्र' (१०३० ई.) अच्छी गद्य कथा है. उस की शैली गद्य प्रधान चंपु है. उस का आधार संस्कृत की 'पंचतंत्र' की कथा है. मूल का आधार लेकर भी प्रौढ, सरल-गद्य शैली में कथाओं को प्रस्तुत किया गया है. उस के पश्चात् १८ वीं शताब्दी के अंततक गद्य की अुल्लेखनीय प्रौढ कृति प्राप्त नहीं है. प्राय: वचन साहित्य आदि में कन्नड गद्य अपना स्वरूप बचाकर आधुनिक युग तक अपना सूत्र जोडता होगा.

अुपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि कन्नड में गद्य कथा की परंपरा दसवीं शताब्दी से ही प्राप्त है. परंतु हिंदी में गद्य के दर्शन सन १३५० ई. के पूर्व नहीं होते सर्व प्रथम प्राप्त गद्य ग्रंथ गोरख पंथीय हठयोग के ग्रंथ हैं. तदनंतर विठ्ठलनाथ जी के 'श्रृंगार रस मंडन' का माध्यम गद्य है. "चौरासी वैष्णवों की वार्ता; 'दो सौ बावन वैष्णवों की वार्ता, आदि चरित ग्रंथ मिलते हैं जिन में धार्मिकता की प्रधानता है. हिंदी में प्राप्त प्रथम गद्यकथा 'नासिकेतोपाख्यान' (सन् १६०३ के बाद) है और द्वितीय गद्यकथा सूरतिकिश्र कृत वैताल पचीसी (सन् १७१० ई.) है. अुपर्युक्त सब ग्रंथ व्रजभाषा में है. पं. रामचंद्र शुक्ल जी के अनुसार रामप्रसाद निरंजनी कृत 'भाषा योग वासिष्ठ' ही सबसे प्राचीन ग्रंथ है जिस में परिष्कृत गद्य का रूप दिखाई पडता है.[१] यही खडी बोली में प्रथम गद्यग्रंथ है.

---

१) पं.रामचंद्र शुक्ल - 'हिंदी साहित्य का अितिहास' दशम संस्करण पृष्ठ ४१०

अठारवीं शताब्दी के अुत्तरार्ध्द और अुन्नीसवीं शताब्दी के पूर्वार्ध्द में आलोच्य दोनों साहित्यों में गद्य-साहित्य का, विशेषत: गद्य कथाओं का बडे प्रमाण में प्रादुर्भाव हुआ. यह साहित्य-क्षेत्र में नवोदय का आरंभ है जिस में गद्य की प्रधानता बढने लगती है.

सन १७९५ से १८६८ तक का काल मैसूर में मुम्मडी कृष्णराज का समय है. यह काल कन्नड साहित्य और संस्कृति के विकास की दृष्टि से अेक अविस्मरणीय युग है. कृष्णराज स्वयं बडे पंडित थे और लेखक भी थे. अुन से अेनक ग्रंथो की रचना हुअी और अुन की प्रेरणा में अनेक ग्रंथ विव्दज्जनों से लिखे गये. बि.अेम्.श्रीकंठय्या लिखते हैं, "अिन के प्रोत्साहन में आर्योंके अपार संस्कृत साहित्य-समुद्र के शिरोरत्न भारत, रामायण और पुराण-काव्यों में चुने हुअे काव्य कन्नड में आये, कन्नड वाचकों को लभ्य हुअे." [1] अिन में अधिक साहित्य गद्य में है. अिन ग्रंथों की चर्चा आगे की जायेगी. अिसी बीच फोर्ट विलियम कालेज कलकत्ता में १८०० ई.में आरंभ हुआ और गिलक्रैस्ट हिंदी और अुर्दू के अध्यापक नियुक्त हुअे. अुन की प्रेरणा से हिंदी में अनेक कथासाहित्यों की रचना हुअी. अिस युग के दो प्रमुख ग्रंथो का परिचय देना यहाँ अुचित होगा.

अा) रानी केतकी की कहानी (हिंदी में)

हिंदी उपन्यास के आरंभ के अिस युग में कथा तथा गद्य साहित्य की दृष्टि से यह महत्वपूर्ण रचना है. शुक्लजी के अनुसार अिस की रचना १७९८-१८०३ ई.के बीच हुअी. अिस के लेखक इंशा अल्ला खाँ थे. अिस में कुंवर अुदय भान तथा रानी केतकी की प्रेम कथा है. शिकार के समय जंगल में आरंभ होनेवाला प्रेम विवाह में परिणत होना चाहता है. पर रानी केतकी के पिता की ओर से अवरोध होनेपर अंत में युध्द, अनेक विघ्नोंके बाद विवाह सफल होता है. रानी केतकी के पिता के गुरु की मंत्र शक्ति और अुस का अुदय भान को हरिण बनाना आदि अद्भुतता का अंश भी अिस में है.

---

१) बि.अेम्.श्रीकंठय्या -'कन्नडिगरिगे ओळ्ळेय साहित्य' तृतीय संस्करण पृष्ठ ९५

खडी बोली की सर्व प्रथम कथा होने के कारण अिस का अैतिहासिक महत्व भी है. डा.टंडन जी के अनुसार अिस का बडा महत्व है, ''भाषा के नमूने की दृष्टि से न केवल अिस युग में 'रानी केतकी की कहानी' की रचना की गयी, वरन् आगे चलकर भारतेंदु युग में अनेक उपन्यास भी अिसी अुद्देश्य से लिखे गये. आज से लगभग डेढ सौ वर्ष पूर्व रचित अिस कहानी में कल्पना की बहुत संगठनात्मक अुडान मिलती है जो युगीन साहित्यिक अुपलब्धि के रूप में मान्य की जानी चाहिअे.''[१]

५) मुद्रा मंजूषा (कन्नड में) (सन् १८२३ ई.)

आधुनिक कन्नड की अुदय कालीन गद्य शैली तथा कथा साहित्य की दृष्टि से यह भी अेक प्रभावी ग्रंथ है. अिस में प्राचीन तथा नवीन कन्नड का मिश्रण संक्रांति काल का परिचायक है. अिस की रचना मुम्मडी कृष्णराज के आश्रय में केंपुनारायणने की. यद्यपि अिस ग्रंथ का आधार है संस्कृत का 'मुद्राराक्षस' नाटक, तो भी यह अुसी का अनुवाद नहीं. लेखक ने अुससे अधिक सामग्रियाँ लेकर अपनी कल्पना शक्ति की सहायतासे अिस कथा को स्वतंत्र रूप दे दिया है. मान्य वि.कृ.गोकाक का मंतव्य है, "यह रचना मध्य युगसे आधुनिक कन्नड के स्थित्यंतर का पथ-चिन्ह है. यह गद्य में अेक रोमंस है जिस में कि संस्कृत के नाटक 'मुद्राराक्षस' की कहानी को अेक अैसी भाषा में मौलिक ढंग से प्रस्तुत किया है जिस में मध्य युगीन और आधुनिक व्याकरण के रूपों का विचित्र मिश्रण है."[२] मेरे मत से गद्यकथा की दृष्टि से ही नहीं, बल्कि कन्नड में उपन्यास के प्रादुर्भाव की दृष्टि से भी अिस ग्रंथ का बडा महत्व है. अिस की कथा अपने विस्तार, रोचकता, कथा शिल्प, कुतूहल वृत्ति की रक्षा आदि की दृष्टि से हमें

---

१) डा.प्रताप नारायण टंडन - 'हिंदी उपन्यास की शिल्पविधि का विकास' द्वितीय संस्करण, पृष्ठ ११७

२) प्रो. वि.के.गोकाक - 'आज का भारतीय साहित्य' द्वितीय संस्क. पृष्ठ ७८

आधुनिक उपन्यास का स्मरण दिलाता है. भाषा-शैली और वर्णन के स्वरूप में प्राचीनता की छाया दृष्टि गोचर होती है, पर कथन की कुशलता में कैंपुनारायण आरंभ के उपन्यास लेखकों से प्रतिभा में कदापि कम नहीं. हमें लगता है कि कन्नड के प्रारंभिक उपन्यासकारों पर अिस का ऋण पर्याप्त है. श्रेष्ठ संशोधक गोविंद पैंजी तो यहाँ तक मानते हैं कि यह ग्रंथ भी कन्नड के प्रथम स्वतंत्र उपन्यास के रूप में स्वीकार किया जा सकता है.[१] हमारी दृष्टि से अुन के प्रस्तुत कथन से अितना ही स्पष्ट होता है कि प्रारंभिक उपन्यासों के संबंध में अिस का स्थान कितने महत्व का है.

क) अन्य कथा साहित्य-

फोर्ट विलियम कालेज के गिलक्रैस्ट की प्रेरणा से वहाँ कअी हिंदी पंडित संस्कृत से हिंदी में कथा साहित्य का अनुवाद करने लगे. अैसे कथा-ग्रंथ कर्नाटक मे मुम्मडी कृष्णराज के आश्रय में भी, प्रकट हुअे. संयोग से कअी कथाएँ तो दोनों भाषाओं में समान रूप से अनूदित हुअी हैं.

१) सिंहासन बत्तीसी (१८०१ ई)

लल्लूलालजीने हिंदी में 'सिंहासन व्दात्रिंशिका' का संस्कृत से अनुवाद किया. मूल कथा पहले ही चर्चित है. कन्नड में 'बत्तीस पुत्तळिय कथे' १८९७ ई.में देवसे और अुन्नीस वीं शताब्दी के आरंभ में मुम्मडी कृष्णराज से अनूदित हैं.

२) बैताल पच्चीसी (१८०१ ई) हिंदी में

'वैताल पंच विंशतिका' का लल्लूलालजीने ही अनुवाद किया.

---

१) 'कन्नड नुडि' (एक पत्रिका) नवेंबर १९५६ में लेखन 'कन्नड कादंबरिगळ' कथे' से अुद्धृत, पृष्ठ २९३

पं.रामचंद्र शुक्लजी के अनुसार ब्रजभाषा में अिस के पूर्व ही अनूदित अिस कथा को लल्लूलालजीने खड़ी बोली में परिवर्तित किया.[1] कन्नड में यह कथा मुम्मडी कृष्णराज के आश्रय में अनूदित होकर 'बेताळ पंच विंशाति' शीर्षक से अुन्नस वीं शताब्दी के पूर्वार्ध्द में प्रकट हुअी. मुम्मडी कृष्णराज की कृपा-छाया में अनेक संस्कृत के श्रेष्ठ काव्य,नाटक आदि गद्यकथा के रूप में प्रकाशित हुअे जिन में स्वयं कृष्णराजने भी कअी ग्रंथों की रचना की. 'शुकसप्तति' (१८२३ ई.में) 'वत्सराजन कथे' (रत्नावली नाटक के आधार से) 'पंचतंत्र' और 'कादंबरी' आदि कथा-कृतियों में प्रमुख हैं.[2] वैसे ही थोडे समय के पश्चात् 'दशकुमार चरिते' और 'हितोपदेश' जैसे ग्रंथ भी कन्नड में अनूदित होकर कथा साहित्य भंडार को भरते रहे.

हिंदी में लल्लूलाल कृत 'प्रेम सागर' (भागवत के दशम स्कंध की कथा) 'माधोनल' सदलमिश्र कृत 'नासिकेतोपाख्यान' (१८०३ ई.) 'गोरा बादल की कथा', राजा शिवप्रसाद कृत 'राजा भोज का सपना' (१८६० ई.के आसपास) आदि कृतियाँ हिंदी कथा-भंडार को समृध्द करती हैं. हिंदी में 'किस्सा साढेतीन यार', 'हातिम ताई' और चहार दर्वेश' आदि कथाएँ फारसी और अरबी से अनूदित हुअी. कन्नड में भी के.एन्. कानोळ्कर से अनूदित 'हातिमन चरितवु' और सुब्रम्हण्य शास्त्री से अनूदित 'चार दर्वेषि कथे' फारसी और अरबी से अनूदित कृतियाँ हैं.[3]

२) गद्य के विकास में अीसाअी मिशनरियों, अधिकारियों का योगदान-

हिंदी और कन्नड साहित्यों की सेवा में अीसाअी मिशनरियों तथा अधिकारियों का कार्य अविस्मरणीय है. मिशनरी पादरी

---

१) पं.रामचंद्र शुक्ल -'हिंदी साहित्य का अितिहास' दशम संस्क.पृष्ठ ४०५

२) आर्.नरसिंहाचार्य -'कर्नाटक कवि चरिते'तृतीय भाग,१९२९ ई.का संस्क. पृष्ठ १७२-१७३

३) वेंकटेशसांगिल -'सिरिगन्नड ग्रंथकर्तर चरित्र कोश'प्रथम भाग,प्रथम संस्क. पृष्ठ क्रमश: २९८ और २०८

KARNATAK UNIVERSITY DHARWAR

धर्म-प्रचार के अुद्देश्य से भारत को आये, बाईबिल आदि धर्म ग्रंथों का प्रचार अुन का प्रधान कार्य था. अत: अिन पादरियों की दृष्टि स्वाभाविकतया गद्य की ओर गयी. गद्य साहित्य का प्रचार मुद्रण यंत्रों के आगमन से सुलभसाध्य भी हो गया. फलत: गद्य का विकास तथा प्रचार अधिक होने लगा. मुद्रण यंत्र भारत को भी आये. उपन्यास के प्रादुर्भाव के लिअे गद्य का विकास तथा मुद्रण यंत्रों का अुपयोग दोनों आवश्यक थे. अिसी दृष्टि से १९ वीं शताब्दि के पूर्वार्ध्द में आलोच्य भाषाभाषी प्रदेशों में मिशनरियों की सेवा का स्थूल परिचय दिया जा रहा है.

बाप्टिस्ट पादरी विलियम कैरी (सन १७६१-१८३४) भारत को आये और कलकत्ता के पास श्रीरामपूर में अपना केन्द्र बनाकर बैठ गये. भारत वर्ष की सब भाषाओं और बोलियों में बाईबिल का अनुवाद करने की अेक बृहद योजना कैरे और अुन के साथियोंने बनाअी थी.[१] कैरी की अध्यक्षता में श्रीरामपूर के मिशनरियोंने १८०७-१८११ में वाईबिल के न्यू टेस्टामेंट का हिंदी में अनुवाद किया.[२] अन्य भाग पीछेसे प्रकाशित हुअे. कैरीने स्वयं कन्नड का भी अध्ययन किया और मार्शमन तथा वार्ड के साथ कन्नड में सर्व प्रथम बाईबिल के 'न्यू टेस्टामेंट' का १८०९ ई.में अनुवाद किया. सन् १८१२ में यह मुद्रित होनेवाला था, पर मुद्रणालय में अेका अेक आग लग जाने से कन्नड वाईबिल की पांडुलिपि दुर्दैव से जल गअी.[३] अत: यह सन् १८२३ में प्रकाशित हुआ.[४] यही नवीन कन्नड का प्रथम गद्य ग्रंथ माना जा सकता है.

---

१) डा.लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय - 'हिंदी साहित्य की भूमिका' प्रथम संस्क. पृष्ठ ४६२

२) वे ही वही पृष्ठ ४६३

३) वरदराज हुयिल गोळ - 'क्रैस्तरिंद कन्नडक्के काणिके' प्रथम संस्क. पृ५५

४) आर्.अेस्.मुगळी -'कन्नड साहित्य चरितहास' प्रथम संस्क. पृष्ठ १९१

"---------- कैरेने १७९४ में मदनावती (बंगाल) में अेक प्रेस स्थापित किया. ---------- अुसी प्रेसमें किसी भी अुत्तर भारतीय अनूदित बाईबिल का सर्व प्रथम पृष्ठ मुद्रित हुआ था. श्रीरामपूर मिशनरियोंने आगे चलकर हिंदी के नये टैप बनाये."[१] "हिंदी प्रदेश के मिर्जापूर, बनारस, इलहाबाद आदि बडे नगरों में १८३५ ई.के बाद ही प्रेस स्थापित हुअे."[२]

फोर्ट लिलियम कालेज के हिंदी अध्यापक प्रो.गिल क्रैस्ट के प्रोत्साहन से वहाँ के पंडितों द्वारा अनुवाद का कार्य जो हुआ, अुस का अुल्लेख अुपर हो चुका है. गिल क्रैस्टने स्वयं कअी शब्दकोश, व्याकरण ग्रंथ लिखकर प्रकाशित किये जिस के कारण विदेशियों को हिंदी यानी हिंदुस्तानी भाषा का अध्ययन सुलभ साध्य हो सका. डा.वाष्णेय अुपर्युक्त कालेज की अुपयुक्तता के संबंध में लिखते है, "वास्तव में जिस वर्ष कालेज की स्थापना हुअी, वह वर्ष आधुनिक भारतीय भाषाओं के अितिहास में अमर रहेगा. अन्य अनेक भाषाओं के अतिरिक्त हिंदी अौर अुर्दू (हिंदुस्थानी) के जीवन में नवीनता का समावेश हुआ, अुन्हें प्रेस की सहायता प्राप्त हुअी, अनेक नये नये टैप ढाले गये, अुन में विराम चिन्हों का प्रयोग प्रारंभ हुआ, आधुनिक व्यवस्थित अौर वैज्ञानिक ढंग से अुन के व्याकरणों अौर कोशों का निर्माण हुआ, अुन में नवीन विषयोंसे संबंधित ग्रंथों की रचना तथा नवीन शब्दावली प्रचलित हुअी."[३]

पादरियों की स्कूल बुक सोसैटी के द्वारा आधुनिक शिक्षासंबंधी पाठ्य पुस्तकें विभिन्न विषयोंपर प्रकाशित होती रहीं. पं.रामचंद्र शुक्लजी अिन दैसाइयों की सेवा का स्मरण करते हुअे लिखते हैं, "हिंदी गद्य के प्रसार में दैसाइयों का बहुत कुछ योग रहा. शिक्षा संबंधिनी

---

१) डा.लक्ष्मीसागर वाष्णेय -'हिंदी साहित्य की भूमिका' प्रथम संस्क. पृष्ठ ४८७

२) वे ही वही पृष्ठ ४८७-८८

३) डा.लक्ष्मीसागर वाष्णेय -'हिंदी साहित्य की भूमिका' प्रथम संस्क. पृष्ठ ३४७

पुस्तकें तो पहले पहल अुन्हों ने तैयार कीं. अिन बातों के लिअे हिंदी प्रेमी अुन के सदा कृतज्ञ रहेंगे."[१]

कैरी की कन्नड सेवा की चर्चा हो चुकी है. अन्य पादरियों की सेवा भी कम महत्व की नहीं है. अुन्नीसवीं शताब्दी के पूर्वार्ध्द में मद्रास के 'फोर्ट सेंट जार्ज कालेज' कन्नड पांडित्य के प्रसारक केंद्र था. यहाँ के कन्नड पंडितों की सहायता से जान म्याकरेल, रेवरेंड रीव, रेवरेंड जान आदि सज्जनों ने महत्वपूर्ण कार्य किया है. जान म्याकरेल का 'ए ग्रामर आफ दि कर्नाटक लैंग्वेज' (१८२० में) रेवरेंड रीव का 'इंग्लिश-कन्नड शब्द कोश' (१८२४ में) आदि आरंभ की रचनाएँ हैं. जिग्लरने 'अंग्रेजी-कन्नड शब्द कोश'(१८७६ ई.) 'कन्नड-इंग्लिश शाला निघंटु' की रचना की. रेवरेंड अेफ.किटेल की अपूर्व कृति 'कन्नड-इंग्लिश शब्द कोश' सन १८९४ ई. में प्रकाशित हुअी.[२]

'इसोपनीति कथाएँ' की चतुर्थ आवृत्ति १८६९ ई.में प्रकाशित हुअी. १८६८ ई. से पहले जे गारेट ने पंचतंत्र की कअी कथाएँ कन्नड में अनूदित करके प्रकाशित कीं.[३] ई.पि.रैस, बि.लुई रैस ईसाई अधिकारियों की रचनाएँ भी कन्नड साहित्य को बडी देन है. जि.प्लेबस्त व्दारा मंगलूर मे कन्नड टाईप तैयार होने का तथा बाद मुद्रणयंत्र यहीं आरंभ होने का अुल्लेख भी मिलता है.[४]

करीब १८४७ ई.में रेवरेंड वीगलने जान बनियन की श्रेष्ठ कृति 'पिलिग्रिम्स प्रोग्रेस' का कन्नड में अनुवाद किया जो 'यात्रिकन संचार'

---

१) पं.रामचंद्र शुक्ल -'हिंदी साहित्य का अितिहास' दशम संस्क. पृष्ठ ४२६

२) वरदराज हुयिलगोळ -'क्रैस्तरिंद कन्नड क्के काणिके' प्रथम संस्क. पृष्ठ १२-१३

३) वे ही वही पृष्ठ २७-२९

४) वरदराज हुयिलगोळ - क्रैस्तरिंद कन्नड क्के काणिके,प्रथम संस्क. पृ.१२

शीर्षकसे प्रकाशित हुआ. कन्नड में उपन्यास के आविर्भाव के अवसर पर अिस का महत्वपूर्ण स्थान है. अिस की विशेषा चर्चा आगे की जायेगी.

डा.मुगळिजी मिशनरियों की साहित्य-सेवा के संबंध में लिखते हैं, "विशेषात: धर्मप्रचार के अुद्देश्य से जो मिशनरी सज्जन यहाँ दौडे आये, अुन्होंने कन्नड भाषा की अविस्मरणीय सेवा की. कन्नड में प्रथम मुद्रणालय आरंभ किया, कन्नड भाषा के प्रौढ अध्ययन के लिअे अुपयुक्त व्याकरण, छंद, शब्दकोश से संबंध रखनेवाले अुद्ग्रंथों की रचना कर पंडितों की सहायता से प्रकाशित किया."[१]

अुपर्युक्त विवरण से स्पष्ट होता है कि दोनों भाषाओं के गद्य के विकास तथा प्रसार में ईसाइयों ने महत्व पूर्ण सेवा की है. चाहे अुन से अनूदित बाइबिल आदि की शैली अुतनी परिष्कृत न रही हो, अिन्हीं के कारण अधिक गद्य कथाएँ अिस युग में साहित्य क्षेत्र में आयीं और मुद्रण-यंत्र का अुपयोग शुरू हुआ, फलत: साहित्य का प्रचार सुलभ-साध्य हो गया. भाषाओं के प्रौढ अध्ययन के लिअे आवश्यक कोश आदि लभ्य होने लगे. अिस प्रकार दोनों भाषाओं में उपन्यास के प्रादुर्भाव की पृष्ठभूमि सन्नध्द हो गयी.

३) <u>उपसंहार</u>

हिंदी और कन्नड साहित्यों की सुदीर्घ परंपरा में कथा परंपरा की गतिविधि का संक्षिप्त विवेचन प्रस्तुत किया जा चुका है. संस्कृत की कथा परंपरा अिन भाषाओं में कैसे काव्यों के व्दारा विकसित,

---

१) डा.आर्.अेस्.मुगळि -'कन्नड साहित्यचरितहास' प्रथम संस्क. पृष्ठ १८८-१८९

परिवर्द्धित हो, वैविध्यपूर्ण स्वरूप ग्रहण कर चली आयी है, उस के दर्शन भी हुये हैं. प्राचीन परंपरागत कथा के साथ तत्कालीन लोक कथाएँ भी उस स्त्रोत को अधिक पुष्ट करती रहीं. यही बात गद्य कथाओं में दिग्दर्शित होती है. आलोच्य दोनों भाषाओं काफी दूर की होती हुई भी उन की साहित्यिक गति विधियों में ऐक अद्भुत सादृश्य का अनुभव भी होता है. गद्य की दृष्टिसे कन्नड हिंदी से पर्याप्त प्राचीनता का गौरव प्राप्त कर सक्ती है. उन्नीसवीं शताब्दी के पूर्वार्ध्द में जो कथाएँ विभिन्न भाषाओं से, विशेषतः संस्कृत से अनूदित होकर प्रकाशित हुईं, उन में भी कुछ कथाएँ दोनों भाषाओं में ऐक ही प्रकार की हैं. ईसाई मिशनरियों का योग दान दोनों भाषाओं के लिये समान है. ईसाइ धर्म ग्रंथ दोनों में समान रूप में प्रकाशित हुये. गद्य के विकास में उन्से समान सहायता मिली. उन्हीं से दोनों भाषाभाषी क्षेत्रों में मुद्रणयंत्रों का आरंभ समान रीति से हुआ. उपन्यास के प्रादुर्भाव तथा प्रचार के लिये गद्य का विकास, मुद्रण यंत्रों का उपयोग दोनों आवश्यक थे, और उन भाषाओं में ये दोनों समान पाये जाते हैं.

आलोच्य भाषाओं में उन्नीसवीं शताब्दी में अनुवादित कथाएँ बडी संख्या में प्रकाशित हुईं और अपनी विशेषताओंसे जनप्रिय बनीं तथा लोगों में पढने की रुचि को बढाया. उन छोटी-बडी कथाओं में वर्णन शैली, कथा के विभिन्न शिल्प विकसित होते रहे. वाचकों की रुचि भी बढती गयी. अतः वाचकवृंद और भी श्रेष्ठ कथा साहित्यों की प्रतीक्षा करने लगे. प्राचीन काल में वाचनाभिरुचिवालोंका मनोरंजन महाकाव्यों और प्राचीन कथाओं से होता था, पर परिवर्तित उस युग में गद्य साहित्य की प्रधानता बढी, और ज्यों ज्यों आधुनिक ज्ञान-विज्ञान का परिचय बढा, अंग्रेजी साहित्य का प्रचार हुआ, त्यों त्यों पाठकों की रुचि में परिवर्तन हुआ. उन नये पाठकों की वाचनाभिरुचि की तृप्ति

के लिऐ नवीन प्रकार के कथा-साहित्य की आवश्यक्ता हुअी. अंग्रेजी में अिस आवश्यक्ता की पूर्ति के लिऐ 'नावेल' (उपन्यास) नामक नवीन प्रकार की साहित्य विधाका प्रादुर्भाव हो चुका था, जिसे अंग्रेजी पढे-लिखे यहाँ के लोग पढ चुके थे. अत: कथा-कहानी की रचनाकर तृप्त रहनेवाले लेखकों को अिस प्रकार की नवीन विधा की रचना के लिऐ प्रेरणा स्वभावत: मिली होगी. उपन्यास अपने स्वरूप में पाश्चात्य मूलसे ही भारत को आया, अिस में संदेहा नहीं. परंतु जब यहाँ की भाषाओं में अपनी ही समृध्द कथा परंपरा थी, अिस परंपरासे यहाँ के प्रादुर्भाव को प्रेरणा अवश्य मिले, तो कोअी आश्चर्य नहीं. आलोच्य भाषाओं के आरंभ के उपन्यासों को ध्यानसे पढनेपर यह प्रेरणा-स्वरूप स्पष्ट विदित होता है.

४) निष्कर्ष-

हमारा निष्कर्ष यह है कि आलोच्य कथा-साहित्यों से दोनों भाषाओं में उपन्यास के प्रादुर्भाव को पर्याप्त प्रेरणा मिली, अुस के अनुकूल वातावरण, उपन्यास के प्रादुर्भाव की पृष्ठभूमि सिध्द हो गयी, फलत: उपन्यास का युग अनुवादित कृतियों से आरंभ हुआ.

...